वात-सार और प्लाविनी

Vāta- Sāra and Plavinī

Dr. Prakash Chintamani Malshe

वात-सार और प्लाविनी

Vāta-Sāra and Plāvinī

सूर्यनमस्कार एक छद्म नाम है। वात सार और प्लाविनी की तकनीक इस नाम के पीछे गुप्त रखी गयी है।
Sūryanamaskāra is a pseudonym. The techniques of Vāta- Sāra and Plāvinī have been kept secret behind this name.

प्रथम संस्करण
First Edition

लेखक
Author

डॉ. प्रकाश चिंतामणि मालशे, एम्.डी., पी.जी.डी.वाय.एम्.
Dr. Prakash Chintamani Malshe, M.D., P.G.D.Y. M.

Title of the Book: वात-सार और प्लाविनी Vāta-Sāra and Plāvinī

First Edition - 2023

Copyright 2023 © Dr. Prakash Chintamani Malshe.

No part of this publication may be reproduced or transmitted in any form or by any means, electronic or mechanical, including photography, recording or any information storage and retrieval system without the permission in writing from the publisher or author.

Disclaimer

The Author is solely responsible for the contents published in this book. The publisher don't take any responsibility for the same in any manner. Errors, if any, are purely unintentional and readers are requested to communicate such errors to the editors or publishers to avoid discrepancies in future.

E-ISBN: 978-93-5747-802-1

MRP Rs. 200/-

Publisher, Printed at & Distribution by:

Selfypage Developers Pvt Ltd.,
Pushpagiri Complex,
Beside SBI Housing Board,
K.M. Road Chikamagaluru, Karnataka.
Tel.: +91-8861518868
E-mail:publish@iiponline.org

IMPRINT: I I P Iterative International Publishers

For Sales Enquiries:

Contact: +91- 8861511583
E-mail: sales@iiponline.org

प्राक्कथन

यद्यपि घेरंड संहिता में वात-सार का और हठ प्रदीपिका में प्लाविनी का वर्णन है, पर वह इतना संक्षिप्त है कि उसे पढ़कर कोई ये क्रियाएं सीख नहीं सकता । साथ ही यह भी एक समस्या है कि इस युग में ये गुह्य क्रियाएं जानने वाले योग गुरू दुर्लभ ही हैं । बहुत से योगाचार्य तो यह कहते हैं कि वात-सार और प्लाविनी की क्रियाएं अब विलुप्त हो चुकी हैं, ये तो आदि काल में ही जानी जाती थी ।

ज्ञान के असीम भण्डार में इसी खाली स्थान को भरने की दिशा में एक छोटा सा प्रयास है यह पुस्तिका। सबसे पहले सन 2007 में एक दिन अपने गहरे ध्यान के समय मुझे यह ज्ञान उपजा कि सूर्यनमस्कार मात्र एक व्यायाम नहीं है। यह वात-सार की, पेट की आँतों में हवा भरने की प्रक्रिया है। मेरे मेडिकल के ज्ञान से मुझे आँतों में हवा भरने के फायदे दिखाई दे रहे थे और इसलिए इस विषय पर गंभीरता से सोचने की आवश्यकता लगी। उस समय भी मैंने एक छोटी सी पुस्तिका प्रकाशित की थी जिसका नाम था ‘हवा पियें स्वस्थ जियें’ ।

प्रस्तुत पुस्तिका उसी का एक परिमार्जित रूप है जिसमे संस्कृत श्लोकों से ज्ञान को एक आधिकारिक रूप दिया गया है । आशा है कि पाठकों को यह पुस्तिका उपयोगी लगेगी और वे इससे लाभान्वित भी होंगे ।

प्रकाश चिंतामणि मालशे

आभार

इस पुस्तिका के लिए सारे श्लोकों की रचना भगवानदास संस्कृत महाविद्यालय हरिद्वार में प्रधानाचार्य रह चुके आदरणीय डॉ. भोला झा जी ने की है। मैं उनका अत्यंत आभारी हूँ।

मेरे अध्ययन में सहायता के लिए मैं हरिद्वार के डॉ. विपिन प्रेमी जी का तथा देहरादून के डॉ. राजीव सिकन्द जी का भी अत्यंत आभारी हूँ जिनके किये हुए एक्सरे इस पुस्तिका में छपे हैं।

इस पुस्तिका में छपे सारे स्केचेस डॉ. कु. शैरोन प्रभाकर द्वारा बनाये गए हैं, उनका भी अत्यंत आभार। ये स्केचेस सबसे पहले सन 2007 में हिन्दी-अंग्रेज़ी में छपी पुस्तिका **‘हवा पियें स्वस्थ जियें’** में छपे थे।

Preface

Although the technique of Vāta-Sāra is mentioned in Gheraṇḍa Saṁhitā, and that of Plāvinī in Haṭhapradīpikā; there is a very short description of both. No one can learn these techniques by just reading the texts. There are practically no teachers available on these two topics. Some even think that the knowledge of these processes has become extinct and that it existed only in ancient times. A need was, therefore, felt to bring about a book on these. The present work is an attempt to fulfil this gap. Some day in the year 2007 I was enlightened during one of my deep meditation sessions, when pondering on the topic of Vāta-Sāra I suddenly had the glimpse that Sūryanamaskāra or Sun Salutation is not simply an exercise, but it was the secret technique of Vāta-Sāra; of filling the intestines with air. The possibility of using these techniques for physical health was the main reason to think deeply about the process. I wrote and published a small booklet with the name "Drink Air Stay Fit" in the year 2007.

The present work is a refined version of the same, with an effort to add authenticity by making it in Sanskṛt.

I hope the curious learners of Yoga will find it useful and interesting.

Prakāsh Chintāmani Mālshe

Acknowledgement

I am highly thankful to Dr. Bholā Jhā, Ex-Principal of Bhagvāndās Sanskṛt Mahāvidyālaya, Haridwar for composing all the ślokas in this text.

I am thankful to Dr. Rajiv Sikund of Dehradun and Dr. Vipin Premi of Haridwar for their help in taking the radiographs of various stages of circulation of air in the gut.

I am also thankful to Dr. Miss Sharon Prabhākar for drawing all the sketches of Sūryanamakāra. These sketches first appeared in the two versions of '**Drink Air Stay Fit**' published in the year 2007.

परिचय

योग के अंतर्गत आठ अंगों से आप सभी भली भाँति परिचित हैं। दूसरे अंग 'नियम' में शौच पहला नियम है और शौच के अंतर्गत जो शुद्धि क्रियाएं आती हैं उनका वर्णन हठ योग के ग्रंथों में मिलता है। अंतर्धौति के अंतर्गत वारि-सार (शंखप्रक्षालन), वह्नि सार, और वात-सार आते हैं। शंखप्रक्षालन आम तौर पर सभी योग गुरू जानते हैं हालांकि आजकल विश्वविद्यालयों में चलने वाले बी एस् सी /एम एस् सी पाठ्यक्रमों में हर जगह ये सिखाया नहीं जाता। कहीं शौचालयों की कमी है तो कहीं केवल इसलिए कि इतना कष्ट उठाने वाले गुरू नहीं हैं।

वात-सार को जानने वाले योग गुरू तो और भी कम हैं। जबकि वात-सार के लिए तो शौचालयों की आवश्यकता भी नहीं।

वात-सार का जो वर्णन घेरंड संहिता में है, वो केवल दो श्लोकों में है, जो इस प्रकार है ।

काकचञ्चूवदास्येन पिबेद्वायुं शनैः शनैः।
चालयेदुदरं पश्चात् वर्त्मना रेचयेच्छनैः ll
(घेरंड संहिता 1/15)
वातसारं परं गोप्यं देहनिर्मलकारकम् ।
सर्वरोगक्षयकरं देहानलविवर्धकम् ll
(घेरंड संहिता 1/16)

जिसका अर्थ है, "कौवे की चोंच की तरह मुंह करके धीरे धीरे हवा पियें। उसके बाद पेट को चलाकर अपानमार्ग से वायु को बाहर निकालें। (1/15); वात सार अत्यंत गुप्त रखने की विद्या है। इससे देह की शुद्धि होती है, सभी रोगों का नाश होता है और देह की अग्नि भी बढती है।(1/16)

प्लाविनी को एक तरह का प्राणायाम कहा गया है। प्लाविनी का वर्णन हठ प्रदीपिका में है, वह भी केवल एक श्लोक में, जो इस प्रकार है :

अन्तःप्रवर्तितोदारमारुतापूरितोदरः।
पयस्यगाधेऽपिसुखात् प्लवते पद्मपत्रवत् ||
(हठप्रदीपिका 3/70)

जिसका अर्थ है "प्रचुर मात्रा में हवा पेट (की आँतों) में भर लेने से कोई भी अनंत जलराशि में भी कमल के पत्ते के सामान तैरता रह सकता है" (3/70)

इसमे काकचञ्चूवदास्येन शब्द का बहुत से योगाचार्यो ने अलग अलग तरह से अर्थ निकाला। मेरा मानना है कि कुछ भी करने से आदमी का मुंह कौवे की चोंच की तरह नहीं दिखेगा। पर आचार्य घेरंड ने तो ऐसा ही कहा है, जैसा किया नहीं जा सकता। तो फिर वह क्या तरीका है जिससे हवा को पिया जा सके? मेरे मन में ये सवाल उठता था और मै अक्सर योगाचार्यो से पूछता था, कि काकी मुद्रा से हवा कैसे पी जाती है। वे होठों को कुछ गोल

करके सांस अन्दर खींचकर दिखाते थे 'इस तरह' । जब मै पूछता, यह तो हवा फेफड़ों में जा रही है, फिर यह हवा पीना कैसे हुआ? तब वे ये तर्क देते थे कि धूम्र 'पान' में भी तो धुआँ फेफड़ों में ही जाता है ! लेकिन श्लोक के अगले चरणों में यह भी तो कहा है कि पेट को चलाकर हवा को नीचे से निकालना भी है । यह तो कोई करके दिखाने वाला योगी मुझे नहीं मिला । फिर एक दिन एक कौवे को देखते हुए मेरी समझ में आया कि असल में काकी मुद्रा का सम्बन्ध कौवे की तरह गर्दन को आगे पीछे करने से है, जिससे हवा भोजन नलिका में प्रवेश करती है । मैंने एक शिष्य से कहा कि वह स्टेथोस्कोप पेट पर लगाकर सुने । उसने सुना कि काकी मुद्रा करते ही हवा पेट में पहुँचने की गुड़-गुड़ की ध्वनि सुनाई पड़ती है; ठीक वैसी जैसी हम आमाशय में रायल्स ट्यूब पहुँचने की पुष्टि करने के लिए सिरिंज से हवा रायल्स ट्यूब में भेजते हैं तब सुनाई पड़ती है । फिर मैं रोज काकी मुद्रा का अभ्यास करने लगा । धीरे धीरे मुझे इस में दक्षता प्राप्त हो गयी ।

सूर्यनमस्कार के बारे में योगाचार्य लोग सोच विचार करते आये हैं । मजे की बात यह है कि चाहे सूर्यनमस्कार का वर्णन घेरंड संहिता और हठ प्रदीपिका में न हो, ये बहुत से आश्रमों में परंपरागत रूप से सिखाया जाता रहा है । पूरे भारतवर्ष में पूर्व से पश्चिम और उत्तर से दक्षिण तक इसके 12 आसन एक से ही हैं ।

आधुनिक काल में सूर्यनमस्कार को लेकर बहुत से योगाचार्यों ने बहुत विचार किया, कि ये 12 आसन इसी क्रम में क्यों करना होते हैं? बहुत से योगाचार्य धीमी गति से करवाते हैं, और बहुत से द्रुत गति से । इनके अलग अलग नाम भी रख दिए गए हैं, 'फ़ास्ट सूर्यनमस्कार' (FSN) और स्लो सूर्यनमस्कार (SSN) और इनपर भरपूर रिसर्च भी चल रहा है । बहुत से आचार्यों ने सूर्यनमस्कार को एक तरह का व्यायाम समझा हुआ है तो बहुत से आचार्यों ने इसे योग का हिस्सा ही स्वीकार नहीं किया है । किसी ने तो एक नयी शृंखला 'चंद्रनमस्कार' के नाम से भी चला दी है ।

फिर साल 2007 में किसी दिन मुझे अपने गहरे ध्यान में अचानक ये ज्ञान मिला, कि सूर्यनमस्कार करने में हम बार बार सिर को ऊपर और नीचे क्यों करते हैं? रहस्य यह है कि जब सिर ऊपर हो तब काकी मुद्रा से हवा पी जाये, और फिर जब जब सिर नीचे किया जाता है और धड़ ऊपर होता है तब वह हवा आमाशय से आँतों की तरफ चली जाती है । इस तरह प्रक्रिया बार बार होती है और पेट की आँतों में प्रचुर मात्रा में हवा पहुँच जाती है । थोड़े शब्दों में कहें तो सूर्यनमस्कार कोई व्यायाम नहीं है, ये तो वात सार और प्लाविनी की प्रक्रिया है! जैसे ही यह ज्ञान मुझे मिला, मैं उसे अपने तक नहीं रख पाया और एक पुस्तिका लिख डाली जिसका नाम था- ' हवा पियें स्वस्थ जियें' । प्रस्तुत पुस्तिका उसी का परिमार्जित रूप है ।

मेरा मेडिकल क्षेत्र का ज्ञान यह बताता है कि पेट की आँतों में हवा भरने के बहुत से फायदे हो सकते हैं । उनमे से दो प्रमुख हैं :

1. पेट में बीमारी पैदा करने वाले कीटाणु अक्सर एनेरोबिक किस्म के होते हैं, अर्थात् ऑक्सीजन के अभाव में जीने वाले । ऑक्सीजन या हवा की उपस्थिति में ये मर जाते हैं या निष्क्रिय हो जाते हैं । पेट के आमाशय में एसिडिटी और अल्सर पैदा करने के लिए उत्तरदायी हैं 'हेलिकोबेक्टर पायलोरी' नाम के कीटाणु, जबकि एंटामीबा हिस्टोलिटिका जिन्हें साधारण भाषा में अमीबा कहते हैं, बड़ी आंत में रहकर दस्त और खूनी पेचिश पैदा कर सकते हैं । अच्छी बात यह है कि वात सार से इन बीमारियों से मुक्ति मिल सकती है ।

2. पेट की आंत में बहुत से हार्मोन बनते हैं जिनमे से आमाशय में खाली पेट बनने वाला 'ग्रेलिन' भूख लगाता है , और भोजन के बाद आँतों में बनने वाला 'जी एल पी -1' पेट भरने की संतुष्टि देता है तथा शरीर में आये हुए ग्लूकोज़ को इधर उधर पहुंचाने में मदद करता है: सीधे भी, और इन्सुलिन के जरिये भी।

   जब बहुत ज़ोरों की भूख लगती है और पेट में चूहे कूदने लगते हैं तो ग्रेलिन इसके लिए ज़िम्मेदार है। अच्छी बात यह है कि काकी मुद्रा से हवा पीकर इन चूहों को शांत किया जा सकता है, थोड़ी देर के लिए ही सही। पी हुई हवा को जब विभिन्न आसनों के द्वारा आँतों में पहुंचाया जाता है तब चार पांच घंटे रहने वाली पेट भरने की संतुष्टि मिलती है जो शायद जी एल पी -1 की मध्यस्थता से होती है। जी एल पी -1 इन्सुलिन का स्राव बढाता है और स्वयं भी शरीर में आई हुई ग्लूकोज़ भी ऊतकों में पहुँचाता है जिससे रक्त में शुगर की मात्रा कम हो कर डायबिटीज़ के रोगियों को फायदा हो सकता है।

   ग्रेलिन और जी एल पी -1 की मात्रा को रक्त में नापना दुष्कर कार्य है क्योंकि एक तो इन हॉर्मोन्स का जीवन काल बहुत ही कम है, और दूसरे इनका स्राव होता है पोर्टल सर्कुलेशन में, जहाँ से हम रक्त का सैंपल नहीं ले सकते। इसलिए हम इस अनुमान की पुष्टि करने में असमर्थ हैं।

जब मुझे समझ में आया कि सूर्यनमस्कार असल में वात सार की, आँतों को हवा से भरने की प्रक्रिया है, तो साथ ही यह भी समझ में आया कि वात सार से मोटापे और डायबिटीज में फायदा हो सकता है । इससे पेट के और आँतों के होर्मोनेस बदल सकते हैं, ठीक वैसे ही जैसे बैरियाट्रिक सर्जरी से बदलते हैं। साथ ही यह भी समझ में आया कि प्राचीन काल से हठयोग विद्या को गुप्त रखने की परम्परा के चलते सूर्यनमस्कार के साथ जुड़ी हुई दो मुद्राएँ गुप्त रखी गयी थीं ।

इस पुस्तिका में इन सब बातों के रहस्य से परदा उठाया गया है।

Introduction

You must be aware of the eight limbs of traditional Yoga, of which the second is called ‘niyama’. Of the five niyamas, the first is śauca, or cleanliness/hygiene; and it involves various internal cleansing processes, like vāri-sāra (śankha-prakṣālana), agni-sāra and vāta-sāra. Vāri-sāra involves cleansing the gastrointestinal tract with lukewarm saline water, and Vāta-Sāra involves cleansing of the gut only with air. Although the technique of vāri-sāra is very well known, it is not taught in all universities in B.Sc. / M.Sc. (Yoga) courses citing various reasons like shortages of toilets, but mostly due to an inertia on the part of teachers.

Vāta-sāra and plāvinī are two yogic techniques described, among several others, in the ancient Yogic texts Gheraṇḍa Saṁhitā and Haṭha Pradīpikā. Although both these techniques involve filling up the intestines with air, vāta-sāra is classified as a cleansing technique while plāvinī is considered a type of prāṇāyāma. There is a very short description of these techniques, only two ślokas about vāta-sāra in the gheraṇḍa saṁhitā and only one about plāvinī in haṭha pradīpikā, as under:

kākacañcūvadāsyena pibedvāyum śanaiḥ śanaiḥ
cālayedudaraṁ paścādvartmanā recayecchanaiḥ.
(Gheraṇḍa saṁhitā 1/15)

vātasāraṁ paraṁ gopyaṁ dehanirmalakārakaṁ
sarvarogakṣayakaraṁ dehānalavivardhakaṁ.
(Gheraṇḍa saṁhitā 1/16)

antaḥpravartitodāramārutāpūritodaraḥ
payasyagādhe’pi sukhāt plavate padmapatravat.
(Haṭha pradīpikā 2/70)

Which mean, “making your mouth like a crow’s beak, drink air slowly slowly. Then by moving the abdomen, expel this air through the lower passage (the anus) (1/15). The technique of vāta-sāra is a

top secret and it purifies the body, removes all diseases and increases the body fire" (1/16)

"With a liberal quantity of air having been filled in (the intestines) of abdomen, one can stay afloat in the deepest waters" (H.P.2/70)

Yogācāryās teaching these techniques are very hard to find. Even the explanation of kākī mudrā is different in different schools. I believe that whatever way one tries, human mouth cannot look like a crow's beak. But Ācārya Gheraṇḍa has said so, that we cannot practice, so then what is the way by which one can drink air? When I asked different yogācāryās about kākī mudrā, some yogācāryās showed me making their lips in a round shape and taking inhalation through this tube-like formation, and when I asked them that this way the air was going into the lungs, so how come we call it air-drinking? They used to give the example of the word 'dhūmrapān' meaning 'drinking smoke' that the smoke of a cigarette also goes into the lungs! But in the śloka it has been said that the ingested air must be moved down and passed as flatus. I found no yoga-guru who could teach this or even do it himself.

Then what is the way of drinking air? One day while observing a crow I realized that rather than making the mouth in the shape of a crow's beak, it is more about movement of the neck, which opens the food-pipe all at once and the atmospheric air gushes in. That day, making my chin move forwards and backwards like a crow's beak, I experienced that gush of air. I asked one of my disciples to put the chest-piece of his stethoscope on my stomach area and listen. He did so and confirmed that when I did kākī mudrā he heard a gurgling sound the way we confirm insertion of a Ryle's tube into the stomach by injecting air through it. I then practiced this technique every day and gradually I mastered it.

The 12-step procedure of Sūryanamaskāra has puzzled most yogācāryas in the modern times. Although not described in either Gheraṇḍa saṁhitā or haṭhapradīpikā, this technique has been taught in several āśramas by tradition. Amazingly, from Kāshmir to

Kanyākumarī, or one can say throughout the length and breadth of India, the series of āsanas is the same.. Yogācāryas have been scratching their heads in explaining why this series of āsanas must be done in this definite order. Some teach it at a fast pace and call it "Fast Sūryanamaskāra" (FSN) and some at a slow pace, "Slow Sūryanamaskāra" (SSN) and lots of research has been done about both. Some yogācāryas totally refuse to accept it as a part of yoga; while others have designed another series of āsanas and named it 'Candranamaskāra'. The most amazing thing about it is, that in one step our head is up, while in the next it is down: we make the trunk upright and inverted repeatedly while performing Sūryanamaskāra.

One fine day in the year 2007, during one of my deep meditation sessions, I suddenly discovered why we do so. I realized that the 12-step procedure of Sūryanamaskāra is not a simple physical exercise as most Yogācāryas think, but it is the technique of Vāta-Sāra and Plāvinī, and that the essential steps of Kākī mudrā and Māndukī mudra have somehow got deleted out of the sequence of 12 āsanas. When we add these two mudras at the appropriate step, whenever the head is up air enters into the stomach through the food pipe and whenever the head is down the air in the stomach moves to the duodenum. A need to write a book on the subject was strongly felt and I wrote and published a booklet "Drink Air, Stay Fit' that year.

The present booklet is a refined version of the same, with new Sanskrit ślokas being composed to add more authenticity to the work. My medical knowledge prompted me to think the benefits of filling intestines with air, and I could think of two main advantages:

1. Aeration of the gut can inhibit pathogenic anaerobic organisms. In particular, Helicobacter pylori and Entamoeba histolytica which are two important well-known pathogens of the gastrointestinal tract can be inhibited by the techniques of vāta-sāra.
2. Filling the gastrointestinal tract with air can alter the gut hormone profile. Ghrelin is secreted by the gastric mucosa and is responsible for the 'hunger pangs' one experiences

while hungry. I have observed that one can easily ward off this sensation (of hunger pangs) by drinking air by kākī mudrā, the way I have learnt it. I have even x-rayed myself after drinking air and seen that the fundus of the stomach expands to accommodate the drunken air. The air can then be manoeuvred to reach the intestines by inverting the trunk; and when the intestines are distended with air, a kind of satiety lasting several hours is experienced. Probably the secretion of another important gut hormone, GLP-1 gets enhanced. It is well known that GLP-1 stimulates insulin secretion and has other actions on glucose metabolism by which it can lower the blood glucose.

Although measurement of these hormones in the blood is extremely difficult because of their short biological half-life, and the fact that these are secreted into the portal blood stream from where we cannot sample the blood. By the time they reach the systemic blood circulation, a large proportion of the secreted hormones is metabolized. For these reasons it is not possible for me to scientifically prove this hypothesis, however, there is reason to believe that daily practice of vāta-sāra can be extremely useful for prevention and treatment of obesity and diabetes mellitus. It may be working through altering the gut hormone profile, the way bariatric surgery does.

Contents

अध्याय 1	वात सार रहस्य	
Chapter 1	The Secret of Vāta Sāra	1-13
अध्याय 2	वात सार विधि	
Chapter 2	The Technique of Vāta Sāra	14-25
अध्याय 3	डॉ. मालशे की सच्छिद्र नलिका विधि	
Chapter 3	Dr. Malshe's Pierced Straw Technique of drinking air	26-29
अध्याय 4	बेरियम एक्सरे द्वारा अध्ययन	
Chapter 4	Studies with Barium X-Rays	30-32

ABOUT THE AUTHOR

Dr. Prakash Chintamani Malshe is a practicing Medical Specialist in Haridwar town of Uttarakhand, India. Born in 1955, his school education was done in Madhya Pradesh. He did his M.B.B.S. in 1977 and M.D. (Medicine) in 1981 from M.G.M. Medical college Indore (M.P.). He has learnt his initial yoga lessons from Swami Adhyatmanand ji of the Divine Life Society Rishikesh in 1986 and since then has continued the yogic practices. By studying the original scriptures of 'Haṭha Yoga Pradīpikā' and 'Gheraṇḍa Saṁhitā' and experimenting on his own body he has come out with some very novel hypotheses about the mechanism of action of yogic practices which are described in his four books 'Yoga Book for Doctors', published in 2005, 'Drink Air- Stay Fit' and 'Hawa Piyen-Swastha Jiyen' (In Hindi) in 2007, and 'A Medical Understanding of Yoga' published in 2012.

Dr. Malshe has addressed various conferences held at IIT Kanpur, U.P. Yoga teachers' association, Lucknow, Kaivalyadhāma, Lonavala, Near Pune, Dr. Harisingh Gaur University Sagar (M.P.), University of Mangalore, (Karnataka) and Ayurvedic Medical College Jamnagar (Gujarat) and has delivered keynote addresses in the National Yoga Week every year from 2007 to 2013 held at the Morarji Desai National Institute of Yoga, New Delhi.

E-ISBN: 978-93-5747-802-1

9 789357 478021

MRP Rs. 200/-

Selfypage Developers Pvt. Ltd